HOW DID WE FIND OUT ABOUT ?

ISAAC ASIMOV

हमें नेपच्यून के बारे में कैसे पता चला?

आइसक एसिमोव

हिन्दी अनुवादः अरविन्द गुप्ता

हमें नेपच्यून के बारे में कैसे पता चला?

आइसक एसिमोव

हिन्दी अनुवाद: अरविन्द गुप्ता

सूर्य के सातवें ग्रह यूरैनस की खोज 1781 में हुई। पर यूरैनस अपनी निर्धारित कक्षा में नहीं घूम रहा था। कुछ तो गड़बड़ थी। क्या कोई अन्य ग्रह उसे पथभृष्ट कर रहा था?

साठ साल बाद दो खगोलशास्त्रियों - एक ब्रिटिश और दूसरे फ्रेंच ने इस समस्या का हल खोजा। दोनों ने स्वतंत्र रूप से काम कर नए ग्रह की सम्भावित स्थिति की घोषणा की।

1846 में दो जर्मन खगोलशास्त्रियों ने इस भविष्यवाणी को सही साबित किया। उन्हें सम्भावित स्थान पर एक हरे-नीले रंग का नया ग्रह मिला। यूरैनस की कक्षा में त्रुटि की गुत्थी अब सुलझ गई। नए ग्रह का नाम 'नेपच्यून' रखा गया। 'नेपच्यून' रोम में समुद्र के भगवान का नाम है।

पिछले 150 सालों में खगोलशास्त्रियों ने सूर्य के इस आठवें ग्रह के बारे में अनेकों रोचक जानकारियां हासिल कीं। इनमें उसके रिंग्स, चंद्रमा, और 'ग्रेट ब्लू स्पाट' नाम का टौरनेडो (बवंडर) शामिल है।

वैसे हमें नेपच्यून के बारे में अभी बहुत कुछ और जानना है। पर जितना भी हम में जानते हैं वो उसकी प्रकृति को समझने के लिए पर्याप्त है। इसके आधार पर हम कुछ नए प्रश्न भी पूछ सकते हैं जिससे वर्तमान और भविष्य के खगोलशास्त्री नेपच्यून को और अच्छे प्रकार से समझ सकें। नेपच्यून हमारे सौर-मंडल का चौथा और अंतिम विशाल ग्रह है।

1. यूरैनस

प्राचीन काल में लोगों ने देखा कि आकाश में तारे हर समय एक ही नमूने में सजे होते थे। पूरा-का-पूरा नमूना आकाश में एक साथ चलता था। उन्हें स्थिर-तारे कहा जाता था क्योंकि वे एक निश्चित स्थान पर स्थिर रहते थे। ऐसा लगता था कि वो आकाश से जुड़े हों और उसके साथ ही घूमते हों।

पर सात ऐसे आकाशीय पिंड थे जिनकी स्थित हर रात बदलती थी और जो तारों में मुक्त होकर घूमते-फिरते थे। उनमें एक सूर्य और दूसरा चंद्रमा था। बाकी पांचों पिंड तारों जैसे ही दिखते थे पर वे तारों से कहीं अधिक चमकदार थे। आज हम इन पिंडों को प्लैनिट्स (ग्रह) कहते हैं। प्लैनिट एक यूनानी शब्द है जिसका नाम है 'घुमन्तू'। इन ग्रहों को हम रोमन भगवानों के नाम से मरक्यूरी (बुध), वीनस (शुक्र), मार्स (मंगल), जुपिटर (बृहस्पति) और सैटर्न (शनि) के नाम से जानते हैं। प्राचीन खगोलशास्त्रियों को लगता था कि यह ग्रह (और सम्पूर्ण तारामंडल) पृथ्वी के चारां ओर घूमते थे।

1543 में एक पोलिश खगोलशास्त्री निकोला कोपरनिकस (1473-1543) ने एक पुस्तक प्रकाशित की। कोपरनिकस को लगा कि बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति और शनि का, पृथ्वी की अपेक्षा, सूर्य के चारों ओर घूमना अधिक तार्किक होगा। उसके अनुसार पृथ्वी भी सर्य की ही परिक्रमा लगाती थी। केवल चंद्रमा, पृथ्वी की परिक्रमा लगाता था।

खगोलशास्त्रियों ने अंतत: कोपरनिकस के विचार को स्वीकारा और फिर उन्होंने सूर्य की परिक्रमा लगाने वाले पिंडों को ही ग्रह माना। यह पिंड थे (सूर्य से दूरी के क्रम में) बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्पति और शनि। चंद्रमा, पृथ्वी का उपग्रह था और वो पृथ्वी की परिक्रमा करता था। इन सब पिंडों से मिलकर हमारा सौर-मंडल (सोलर-सिस्टम) बनता था। 'सोलर' शब्द का लैटिन में अर्थ होता है 'सूर्य'।

टेलिस्कोप का आविष्कार 1608 में हुआ और उसका तुरन्त उपयोग आकाश में ऐसे धुंधले पिंडों के देखने के लिए शुरू हुआ जिन्हें केवल आंख से देख पाना सम्भव न

था। 1610 में इतालवी खगोलशास्त्री गैलिलियो (1564-1642) ने बृहस्पति की परिक्रमा करते हुए उसके चारों उपग्रहों को देखा।

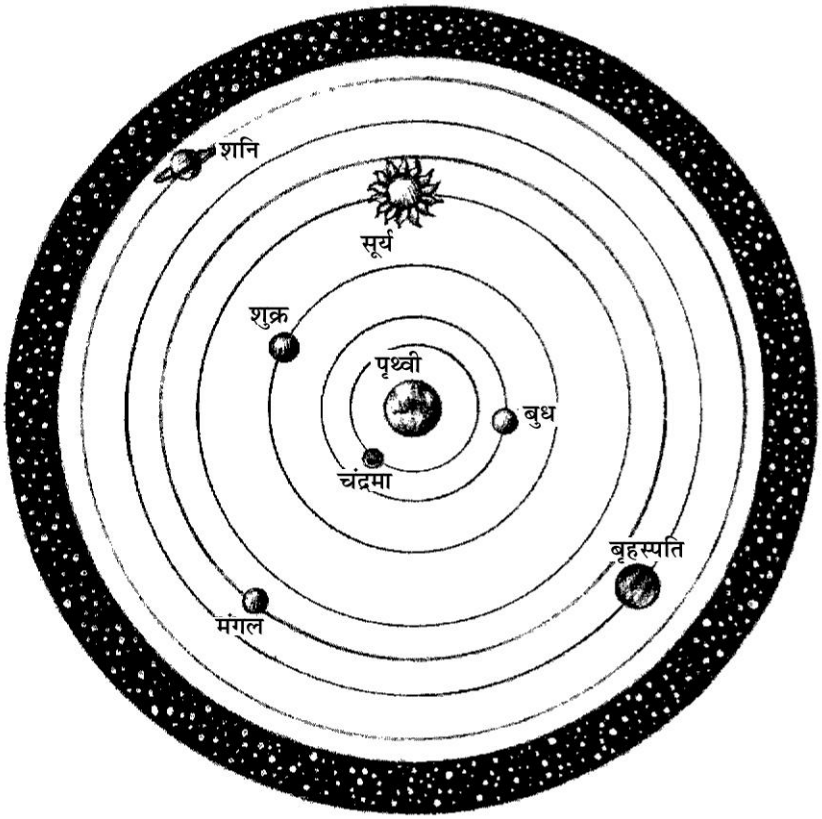

टौलमी का बृहमांड (स्थिर तारे)

1665 में डच खगोलशास्त्री क्रिस्टियन हयूजेन्स (1629-1995) ने शनि के उपग्रह की खोज की। 1684 में फ्रेंच खगोलशास्त्री जियोवानो डोमिनिको कैसिनी (1625-1712) ने शनि के तीन अन्य उपग्रहों को खोजा।

1672 में कैसिनी ने सूर्य से सभी ग्रहों की दूरी का अनुमान लगाया।

शनि, सूर्य से 887-मिलियन किलोमोटर की दूरी पर था। यह पृथ्वी और सूर्य की दूरी से साढ़े-नौ गुना ज्यादा था।

कैसिनी के समय में और उससे एक शताब्दी बाद तक शनि को ही सूर्य से सबसे दूर का ग्रह समझा जाता था। खगोलशास्त्रियों ने ग्रहों को उससे अधिक दूर होने की

कल्पना भी नहीं की थी। लोगां का सोच था कि अगर वो ग्रह अस्तित्व में होंगे तो वे अवश्य दिखेंगे। क्योंकि बाकी सारे ग्रह चमकीले थे और साफ दिखते थे।

एक जर्मन संगीतज्ञ विलियम हर्शिल (1738-1822) की विज्ञान में बेहद रुचि थी। उनका जन्म हैनोवर में हुआ था और जर्मनी के उस हिस्से पर तब अंग्रेज राजा का शासन था। 1757 में हर्शिल सदा के लिए ब्रिटेन चले गए और वहां बाथ शहर में संगीत के एक मशहूर शिक्षक बने।

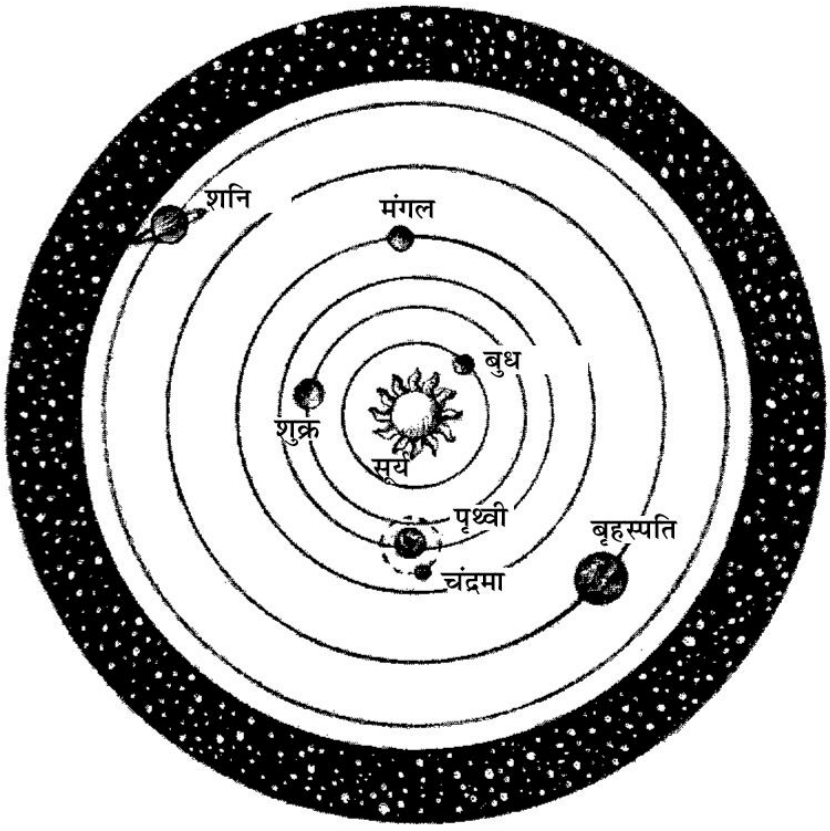

कोपरनिकस की दुनिया (स्थिर तारे)

पेशे से हर्शिल संगीत शिक्षक थे परन्तु उनकी खगोलशास्त्र में गहरी रुचि थी। दरअसल वो खगोलशास्त्री बनकर आकाश में तारों और अन्य पिंडों का वैज्ञानिक अध्ययन करना चाहते थे। वो एक टेलिस्कोप खरीदना चाहते थे। परन्तु उनके पास एक अच्छा टेलिस्कोप खरीदने के लिए पैसे नहीं थे इसलिए उन्होंने खुद एक टेलिस्कोप

बनाया। हर्शिल ने लेन्स और दर्पण घिसने में बहुत समय लगाया और वो इस काम में बहुत दक्ष हो गए। अंत में उनके पास दुनिया के सबसे अच्छे टेलिस्कोप थे।

अच्छा टेलिस्कोप हाथ में आने के बाद वो आकश में हरेक पिंड का अध्ययन करने लगे। 13 मार्च 1781 को जब हर्शिल एक-के-बाद एक तारे देख रहे थे तो उन्हें अचानक आकाश में एक प्रकाश की चकती दिखाई दी। तारे हमेशा प्रकाश-बिन्दु होते हैं इसलिए प्रकाश-चकती का तारा होना सम्भव नहीं था। हर्शिल को वो कोई धूमकेतू लगा।

हर्शिल का चित्र उस टेलिस्कोप के साथ जिससे उन्होंने यूरैनस खोजा

हर्शिल उसका अध्ययन करते रहे। उन्हें उस प्रकाश-चकती की किनार स्पष्ट दिखाई दीं। यह बहुत आश्चर्य की बात थी क्योंकि धूमकेतुओं की किनार हमेशा धुंधली होती हैं। एक और बात थी - नया पिंड आसमान में धीमी गति से बढ़ रहा था। कोई पिंड सौर-मंडल में जितनी अधिक दूर होता है वो तारों की पृष्ठभूमि में उतनी ही धीमी गति से चलता है। क्योंकि यह पिंड शनि से भी धीमी गति से चल रहा था इसलिए यह मानना ठीक था कि वो शनि से अधिक दूर होगा। अगर कोई धूमकेतू उतनी दूर होता तो वो कभी दिखाई नहीं पड़ता।

हर्शिल इस निर्णय पर पहुंचे कि उन्होंने एक नया ग्रह खोजा था। मानव सभ्यता शुरू होने के पश्चात शायद यह नए ग्रह की पहली खोज थी। यह ग्रह सूर्य से 1770-मिलियन मील दूर था। यह दूरी शनि से दुगनी थी। बहुत दूर होने के कारण यह ग्रह काफी धुंधला था। उसके धुंधलेपन और धीमी गति के कारण अगर खगोलशास्त्रियों उसे कभी पहले कभी देखा भी होगा तो भी उन्होंने उसपर ज्यादा ध्यान नहीं दिया होगा।

अंग्रेज खगोलशास्त्री जौन फ्लैमस्टीड (1646-1719) ने इस दूर स्थित ग्रह को 1690 में देखा था। पर उन्होंने उसे अपने रिकार्ड में एक तारा समझ कर दर्ज किया। फ्रेंच खगोलशास्त्री पियरे चार्ल्स डी मोनियर (1675-1757) ने 1750 में इस ग्रह को तेरह बार देखा था। उन्होंने हर बार उसकी स्थित का दर्ज किया - यह सोचकर कि वो कोई तारा होगा।

हर्शिल के अच्छे टेलिस्कोप और मेहनत ने ही नए ग्रह को खोजा था। हर्शिल नए ग्रह को ग्रेट ब्रिटेन के सम्राट जार्ज-तृतीय के सम्मान में 'जौर्जियम साइडस' (द जौर्जियन स्टार) बुलाना चाहते थे। अन्य ब्रिटिश खगोलशास्त्री उसे हर्शिल के सम्मान में 'हर्शिल' नाम देना चाहते थे। पर एक जर्मन खगोलशास्त्री जोहान इलर्ट बोडू (1747-1826) ने सुझाया कि नामकरण के मसले में उन्हें प्राचीन मिथकों का ही सहारा लेना चाहिए। बाकी खगोलशास्त्री ने उनसे सहमति जताई।

अगर हम मंगल से शुरू करें तो उसके पास का ग्रह बृहस्पति है। रोमन मिथक के अनुसार बृहस्पति, मंगल के पिता थे। उसके अगले ग्रह शनि का नाम, बृहस्पति के पिता के नाम पर रखा गया। इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए बोडू ने नए ग्रह का नाम शनि के पिता का नाम - यानि 'यूरैनस' रखने की सलाह दी। सबने इस नाम को स्वीकारा।

1787 में हर्शिल ने यूरैनस के दो उपग्रहों की खोज की और उन्हें 'टाइटैनिया' और 'ओबरान' के नाम दिए।

अन्य खगोलशास्त्रियों ने भी यूरैनस का अध्ययन किया। यूरैनस को सूर्य के चारों ओर अपनी कक्षा में किस प्रकार चक्कर लगाना चाहिए था यह उन्हें पता था। 1687 में ब्रिटिश वैज्ञानिक आइसक न्यूटन (1662-1727) ने गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत खोजा था। इस सिद्धांत के अनुसार दुनिया में हरेक पिंड, हरेक अन्य पिंड को खींचता था। और इस बल की मात्रा उनके भार (मास) और उनके बीच की दूरी पर निर्भर करती था।

हमारे सौर-मंडल में सूर्य का भार सबसे अधिक है इसलिए उसके प्रभाव से यूरैनस की गति की गणना करना सम्भव होगा। परन्तु शनि और बृहस्पति भी बड़े ग्रह हैं और कभी-कभी वो सूर्य की अपेक्षा यूरैनस के ज्यादा करीब होते हैं। इसलिए वे यूरैनस पर खींच का प्रभाव डालते हैं जिससे यूरैनस की गति पर कुछ प्रभाव पड़ता है।

सूर्य, शनि और बृहस्पति के खिंचाव का हिसाब करके खगोलशास्त्री यूरैनस की कक्षा की शुद्ध गणना करना चाहते थे। इससे उन्हें तारों की पृष्ठभूमि में यूरैनस का पथ और उसकी सही स्थिति का बारीकी से पता चलता।

1821 में फ्रेंच खगोलशास्त्री एलेक्सिज बूवर्ड (1767–1843) यूरैनस का गहरा अध्ययन कर रहे थे। यूरैनस की खोज के बाद से खगोलशास्त्रियों के पास जितने भी आंकड़े थे उन्होंने उसके आधार पर यूरैनस की आकाश में स्थिति को प्लॉट किया। उन्होंने उन लोगों के अवलोकनों को भी शामिल किया जिन्होंने बिना पहचाने यूरैनस को देखा था और उसकी स्थितियों को नोट किया था।

बूवर्ड को अपने शोध से साफ लगा कि यूरैनस अपनी निर्धारित कक्षा में नहीं घूम रहा था। 1821 तक यूरैनस की निर्धारित और वास्तविक स्थिति में बहुत अंतर आ चुका था। यह अंतर चंद्रमा के व्यास का 1/15 था। वैसे यह अंतर बहुत नहीं था पर वो खगोलशास्त्रियों की नींद हराम करने के लिए काफी था।

क्या न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत में तो कुछ त्रुटि तो नहीं थी? क्या यूरैनस के पथ को तार्किक रूप से समझाने के लिए सिद्धांत में कुछ बदल की जा सकती थी? खगोलशास्त्री, न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत में कुछ बदल करना नहीं चाहते थे क्योंकि बृहस्पति और शनि की कक्षाएं तो सिद्धांत के हिसाब से बिल्कुल सही थीं। अगर सिद्धांत को यूरैनस के लिए बदला जाता तब फिर बृहस्पति और शनि की कक्षाएं फिट नहीं हातीं।

क्या बृहस्पति और शनि, या दोनों के भार खगोलशास्त्रियों की गणना से अलग थे या फिर वो यूरैनस की दूरी कुछ अलग थी? उस स्थिति में यूरैनस पर बृहस्पति और शनि का खिंचाव अपेक्षा से कुछ कम या ज्यादा हो सकता था और उससे यूरैनस की विकृत कक्षा की गुत्थी सुलझ सकती थी। खगोलशास्त्रियों ने बहुत अच्छी तरह से बृहस्पति और शनि के भार की दुबारा पुष्टि की। फिर भी वे यूरैनस की गति में गड़बड़ी को नहीं समझा पाए।

अब खगोलशास्त्रियों के सामने सिर्फ एक सम्भावना बची। क्या गुरुत्वाकर्षण का कोई और खिंचाव था जिसे वे बिल्कुल नजरंदाज कर रहे थे? क्योंकि खिंचाव काफी

अधिक था इसलिए वो किसी बड़े ग्रह से ही आ सकता था। अगर वो अनाम ग्रह यूरैनस की अपेक्षा सूर्य के अधिक निकट होता तो वो ज्यादा चमकीला होता और लोगों ने उसे कब का पहचान लिया होता।

इससे एक बात साफ थी। अनाम ग्रह, यूरैनस की अपेक्षा सूर्य से अधिक दूर होगा। अगर ऐसा था तो अनाम ग्रह यूरैनस से भी धुंधला होगा और उसकी गति भी बहुत धीमी होगी। इस कारण से उसे देख पाना और पहचानना बहुत मुश्किल होगा। अगर 1781 तक यूरैनस की खोज नहीं हुई थी। तो फिर उससे भी दूर और धुंधले ग्रह को खोज पाना तो और भी दुश्वार काम था।

अगर नया ग्रह, यूरैनस के पास था तो वो यूरैनस पर अपनी खींच से प्रभाव डाल सकता था। तब बृहस्पति और शनि नए ग्रह से बहुत दूर होंगे और उन पर उसकी खींच का प्रभाव बहुत कम होगा और उनकी स्थितियां नहीं बदलेंगी। इसी वजह से यूरैनस की कक्षा में कुछ गड़बड़ी आ रही थी, जबकि बाकी ग्रहों की कक्षाएं ठीक थीं।

अगर इस प्रकार का ग्रह, यूरैनस के आगे मौज्द था तो वो अच्छे टेलिस्कोप से दिखना चाहिए था। क्योंकि वो ग्रह इतना धुंधला था और हजारों अन्य धुंधले तारों से घिरा था इसलिए वो तारों के अथाह समुद्र में कहीं खो गया था। इसके लिए वो अनाम ग्रह आकाश के किस भाग में स्थित था यह जानना जरूरी था। नहीं तो खोज का कार्य बेकार जाता।

पर फिर किसी को मालूम भी नहीं था कि वो अनजान ग्रह आसमान में कहां छिपा बैठा था।

2. नए ग्रह की तलाश

1841 में एक 22-वर्षीय छात्र जौन काउच एडम्स (1819-1892) केम्ब्रिज में खगोलशास्त्र पढ़ रहा था। उसके पास समय का अभाव था। क्योंकि जब वो पढ़ नहीं रहा होता था तो वो आजीविका के लिए अन्य छात्रों को पढ़ा रहा होता था। पर जब

छुट्टियां आयीं तो उसे कुछ खाली समय मिला। इस समय में उसने यूरैनस के आगे स्थित रहस्यमय ग्रह की गुत्थी को सुलझाने की बात सोची। इस ग्रह की गति से यूरैनस की गति पर असर पड़ रहा था।

जौन काउच एडम्स

एडम्स ने अपने काम को इस तर्क के आधार पर सरल बनाया। क्योंकि शनि, सूर्य से बृहस्पति की अपेक्षा दुगनी-दूरी पर है, और यूरैनस, सूर्य से शनि की अपेक्षा दुगनी-दूरी पर है इसलिए शायद नया ग्रह, सूर्य से यूरैनस की तुलना में दुगनी-दूरी पर हो। इस गणना के अनुसार नया ग्रह, सूर्य से 3500-मिलियन मील दूर होगा।

एक और बात थी। शनि, बृहस्पति से छोटा था। यूरैनस, बृहस्पति से छोटा था। इसलिए यूरैनस से आगे का नया ग्रह, यूरैनस से छोटा होगा। फिर भी वो एकदम छोटा नहीं होगा। नया ग्रह, पृथ्वी से कई गुना बड़ा होगा।

एडम्स ने इस प्रकार नए ग्रह के माप के और सूर्य से उसकी दूरी कल्पना की। 1841 में वो ग्रह कहां होगा जिससे वो यूरैनस की कक्षा में निर्धारित बदल करने में सफल हो?

यूरैनस सूर्य के जिस ओर हो, नए ग्रह का उसी ओर होना अनिवार्य होगा। अगर नया ग्रह सूर्य की विपरीत दिशा में होगा तो फिर वो बहुत दूर होगा और यूरैनस की कक्षा में बदल लाने में सक्षम नहीं होगा। यह जानकारी काम की तो थी पर पर्याप्त नहीं थी। एडम्स को नए ग्रह की गति की गणना करनी थी जिससे वो यूरैनस पर उसके द्वारा डाले प्रभाव को समझा सके।

यह गणित की एक कठिन समस्या थी और अधिकांश खगोलशास्त्रियों ने इस चुनौती को स्वीकार करने से इंकार किया। उन्हें लगा कि इस समस्या को सुलझाना में बहुत समय खर्च होगा और नतीजे भी ठीक नहीं आएंगे। पर एडम्स उस समय युवा था, उसमें जोश था और उस समय वो केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी में गणित का सबसे होनहार छात्र समझा जाता था।

सितम्बर 1845 के मध्य तक एडम्स ने अपनी गणना पूरी कर ली थी। उस समय उसे कोई नहीं जानता था और एडम्स के पास कोई टेलिस्कोप नहीं था। फिर वो ऐसे शख्स की तलाश करने लगा जिसके पास टेलिस्कोप हो और जो सुझाए स्थान पर नए ग्रह की तलाश करने के लिए राजी हो। यह काम आसान नहीं था। उन दिनों टेलिस्कोपों की कमी थी और उन्हें महत्वपूर्ण कामों के लिए ही उपयोग किया जाता था। कोई भी गम्भीर व्यक्ति एडम्स के हास्यापद सुझाव के अनुसार कार्य करने का खतरा नहीं उठाना चाहता था।

ग्रेट ब्रिटेन में दो लोगों के हाथों में टेलिस्कोपों का नियंत्रण था। एक थे जेम्स चैलिस (1803-1882) जो केम्ब्रिज वेधशाला के निदेशक थे। दूसरे थे चैलिस के बॉस जार्ज बिडल एयिरी (1801-1892) जो रॉयल एस्ट्रोनोमर थे। एडम्स को किसी युक्ति से इन दोनों में अपने काम के प्रति रुचि जगानी थी। चैलिस और एयिरी दोनों को लगता था कि गणितीय गणना से किसी भी ग्रह की कक्षा या स्थिति नहीं जानी जा सकती थी। उनकी एडम्स के काम में कोई रुचि नहीं थी।

जब एडम्स अपने काम को लेकर चैलिस के पास गया तो उसने सहायता करने से साफ इंकार किया और उसे एयिरी के पास जाने को कहा।

एयिरी तो चैलिस से भी खराब निकला। वो बहुत घमंडी था और छोटी-छोटी चीजों पर लोगों को दुत्कारता था। अपनी सीमित कल्पनाशक्ति के कारण वो कभी भविष्य की नहीं सोचता था। खगोलशास्त्र में उसने जो कुछ किया वो हमेशा फेल हुआ।

कुछ कारणों से एडम्स, एयिरी से सम्बन्ध साधने में असफल रहा। उस समय टेलीफोन और टेलिग्राफ नहीं थे। एडम्स उसे पत्र लिख सकता था या फिर खुद जाकर

एयिरी से मिल सकता था। एडम्स दो बार उसके घर गया भी पर दोनों बार एयिरी नहीं मिला।

दूसरी बार एडम्स रुका। वो एयिरी के आने का इंतजार करता रहा। एयिरी आया और खाने पर बैठ गया और उसके खानसामे ने एडम्स का संदेश एयिरी तक नहीं पहुंचाया।

अन्य खगोलशास्त्री एडम्स के काम से प्रभावित थे पर अंततः एयिरी के हाथ में ही टेलिस्कोप की कमान थी। अंत में जब एयिरी को एडम्स की गणना का पता चला तो उसने उसमें कोई रुचि नहीं दिखाई। चैलिस की तरह ही एयिरी को भी लगा कि टेलिस्कोप से नए ग्रह को खोजना समय की बरबादी थी। 'क्या तुम्हारी गणना सूर्य और यूरैनस की दूरी पर कोई पकाश डालेगी?' उसने एडम्स से पूछा। पर एडम्स का उस प्रश्न से कुछ लेना-देना नहीं था। एडम्स जल्द ही समझ गया कि एयिरी ने उसकी गणना के महत्व को बिल्कुल नहीं समझा था।

एडम्स एक संकोची और शरीफ इंसान था। उसे लगा कि एयिरी को वो कभी मना नहीं पाएगा। और कोई खगोलशास्त्री टेलिस्कोप से नए ग्रह को देखेगा नहीं। इसलिए एडम्स ने अपने मुहिम को त्याग दिया।

उसी समय फ्रांस में एक प्रसिद्ध खगोलशास्त्री डोमनीक फ्रैंकोइज अरागो (1786-1853) खगोलशास्त्र की कुछ कठिन समस्याओं पर काम कर रहे थे। वो युवा खगोलशास्त्रियों की इस काम में रुचि जगाना चाहते थे और मदद करना चाहते थे। एयिरी से बिल्कुल विपरीत वो एक बहुत मिलनसार इंसान थे।

अरागो की रुचि एक अन्य फ्रेंच खगोलशास्त्री उरबेन जीन जोजफ लुवेरे (1811-1877) में जगी। एडम्स जैसे लुवेरे भी एक काबिल गणितज्ञ था। अरागो ने लुवेरे से बुध ग्रह की कक्षा की गणना करने को कहा। बुध ग्रह की कक्षा थोड़ी विकृत थी और वो गुरुत्वाकर्षण सिद्धांतो के अनुसार नहीं थी।

लुवेरे ने अन्य खगोलशास्त्रियों की तुलना में इसका गहराई से अध्ययन किया। उसने बुध पर अन्य ग्रहों के खिंचाव का अध्ययन किया और उससे बुध की कक्षा में विकृति को सही तरीके से समझाया जा सका।

पेरिस वेधशाला के सामने उरबेन जीन जोजफ लुवेरे

लुवेरे की गणना से आरागो बहुत प्रभावित हुआ और तब उसने युवा खगोलशास्त्री से यूरैनस की कक्षा की कठिन समस्या का हल खोजने को कहा।

लुवेरे काम में जुट गया। उसने यूरैनस ग्रह के सभी अवलोकनों को एकत्रित किया। इसके लिए उसने यूरैनस ग्रह की खोज से पहले की जानकारी भी इकट्ठी की। 1 जनवरी 1846 को उसने अपने नतीजों का ऐलान किया। उसके परिणाम बिल्कुल वही थे जिन पर एडम्स आठ महीने पहले पहुंचा था। (लुवेरे को एडम्स के काम का बिल्कुल ज्ञान नहीं था)।

जब एयिरी के पास लुवेरे के काम की सूचना पहुंची तो उसने उसमें तत्काल रुचि दिखाई। क्योंकि लुवेरे और एडम्स दोनों एक ही नतीजे पर पहुंचे थे, इसलिए उसके सच होने की ज्यादा सम्भावना थी। एयिरी ने इसका पूर्ण श्रेय लुवेरे को दिया और एडम्स के काम को बिल्कुल नजरंदाज किया। शायद एयिरी ने शर्म के मारे ऐसा किया हो। वो ऐसा ढोंग करता रहा जैसे वो एडम्स के काम को जानता ही न हो।

एयिरी ने लुवेरे को पत्र लिखकर वही यूरैनस और सूर्य के बीच की दूरी वाला सवाल पूछा। इस बकवास सवाल का समस्या से कुछ लेना-देना ही नहीं था। लुवेरे, एडम्स की तरह शांत और शरीफ नहीं था। सच यह था कि लुवेरे भी एयिरी जैसा ही घमंडी था। लुवेरे ने जवाब में एयिरी को लिखा कि उसका सवाल बेकार और महत्वहीन था।

लुवेर के आत्मविश्वास से एयिरी प्रभावित हुआ और उसने चैलिस को केम्ब्रिज वेधशाला में अनजाने ग्रह की खोज करने के आदेश दिए।

चैलिस की अभी भी इस काम में रुचि नहीं थी। इसलिए उसने इस काम में बहुत विलम्ब किया। चैलिस की रुचि नए धूमकेतू खोजने में थी।

चैलिस ने 29 जुलाई 1846 को नए ग्रह की खोज शुरू की। लुवेरे द्वारा लिखा पत्र अब एयिरी के पास पहुंचे दो माह बीत चुके थे। और जब चैलिस ने काम शुरू किया तब उसने आकाश के उस क्षेत्र का निरीक्षण नहीं किया जिसका उल्लेख लुवेरे और एडम्स ने किया था। वो अंधाधुंध आकाश का निरीक्षण करता रहा क्योंकि उसे लुवेरे और एडम्स के कथन में कोई विश्वास नहीं था। इस सर्वेक्षण को ईमानदारी से करने के लिए चैलिस को 3000 तारों का अध्ययन करना पड़ता और फिर
निर्धारित स्थान से हटे पिंडों को खोजना पड़ता। फिर उसे यह भी देखना पड़ता कि वो तारा हर रात अपनी स्थिति बदलता है या नहीं।

चैलिस अपने युवा खगोलशास्त्री साथियों के साथ इस मुश्किल काम को करता रहा और सभी तारों की स्थितियों को नोट करता रहा। इस काम को उसने बहुत यांत्रिक तरीके से किया, जबकि इस लिए बारीक अवलोकन और अध्ययन की जरूरत थी। क्योंकि चैलिस की इस काम में कोई रुचि नहीं थी इसलिए वो एक तरह से बेगार काटता रहा।

असल में 4 और 12 अगस्त 1846 को चैलिस और उसकी टीम ने अनाम ग्रह की स्थिति को नोट करके प्लाट किया था। वो लगभग वहीं थे जहां पर लुवेरे और एडम्स ने अपनी गणना से नए ग्रह के होने की भविष्यवाणी की थी। पर चैलिस ने उस स्थान को बहुत सरसरी निगाह से देखा। उस स्थान पर कोई तारा नहीं होना चाहिए था इस पर उसने ध्यान ही नहीं दिया।

3. नेपच्यून

इस बीच लुवेरे भी समस्याओं से जूझ रहा था। लुवेरे के पास अपना कोई टेलिस्कोप नहीं था और फ्रांस में कोई भी खगोलशास्त्री अपने टेलिस्कोप से नए ग्रह को

आकाश में नहीं खोजना चाहता था। एयिरी ने लुवेरे को बताया था कि चैलिस नए ग्रह खोज रहा था। पर हफ्तों बीतने के बाद भी लुवेरे को चैलिस से प्रगति की कोई सूचना नहीं मिली।

लुवेरे को एक वर्ष पहले एक खगोलशास्त्री जोहान गोटिफ्रिड गल्ले का एक शोधपत्र मिला था।

गल्ले (1812-1910) एक जर्मन खगोलशास्त्री था जो बर्लिन वेधशाला में काम करता था। लुवेरे को गल्ले का काम बहुत पसंद आया और उसने 18 सितम्बर 1846 को गल्ले को एक पत्र लिखा। उसमें लुवेरे ने उसे नए ग्रह की स्थिति के बारे में बताया और गल्ले से उसे टेलिस्कोप द्वारा आकाश में खोजने की विनती की।

पत्र मिलने के बाद गल्ले इस काम को हाथ में लेना चाहता था। पर उससे पहले उसे वेधशाला के निदेशक जोहान फ्रैंज ऐन्के (1791-1865) की अनुमति की जरूरत थी। ऐन्के की इस काम में कोई विशेष रुचि नहीं थी। उसे लगता था कि इस खोज में सिर्फ समय बरबाद होगा। पर युवा छात्र हेनरिच लुडविग डारेह (1822-1875) उस समय वहां मौजूद था और उसने बहुत जोरशोर से गल्ले की तरफदारी की।

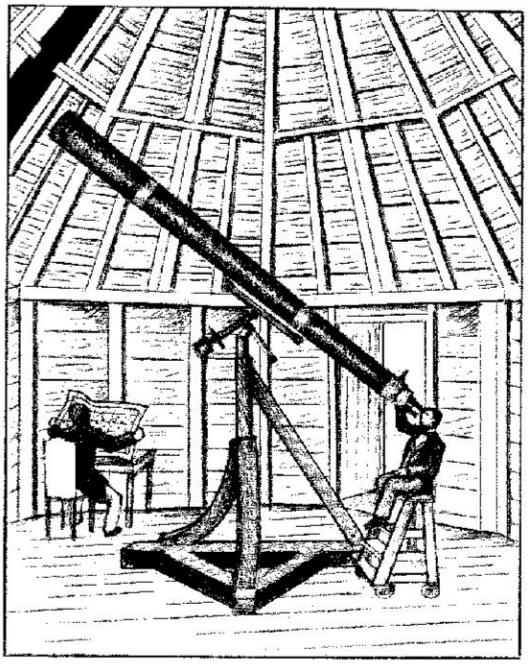

1846 में जोहान गोटिफ्रिड गल्ले और हेनरिच लुडविग डारेह, नेपच्यून ग्रह को खोजते हुए।

इत्तिफाक से उस दिन ऐन्के का जन्मदिन था। इसका मतलब उस रात वो वेधशाला में नहीं आएगा और न ही टेलिस्कोप का उपयोग करेगा। इसलिए उसने एक रात के लिए वेधशाला के बढ़िया टेलिस्कोप के इस्तेमाल की अनुमति दे दी।

गल्ले और डारेह ने रात होते ही टेलिस्कोप से अपनी खोज शुरू कर दी। चैलिस के विपरीत उन्होंने सीधे उसी स्थान को खोजना शुरू किया जहां लुवेरे ने नए ग्रह के होने की भविष्यवाणी की थी। खोज में उन्हें कुछ दिक्कत भी आई। वो एक छोटी चकती को खोज रहे थे और वो

उन्हें मिल नहीं रही थी।

डारेह को तब एक अच्छा विचार सूझा – वो आकाश के उसे क्षेत्र के तारों का नक्शा लाएं। नक्शे पर सभी तारे होंगे और फिर उन्हें आकाश पर बस नए ग्रह जितना चमकीला तारा खोजना होगा। वो तारा, कागज के नक्शे पर नहीं होगा। इसका मतलब वो तारा नहीं, बल्कि ग्रह होगा। वो तभी उस क्षेत्र में आया होगा। नक्शा बनाते समय वो आकाश के उस क्षेत्र में नहीं होगा।

इसके लिए तारों के एक विस्तृत नक्शे की जरूरत होगी। नहीं तो तारे उन स्थानों पर दिखेंगे जहां उन्हें नहीं होना चाहिए था। इसके लिए वाकई में एक अच्छे नक्शे की जरूरत थी।

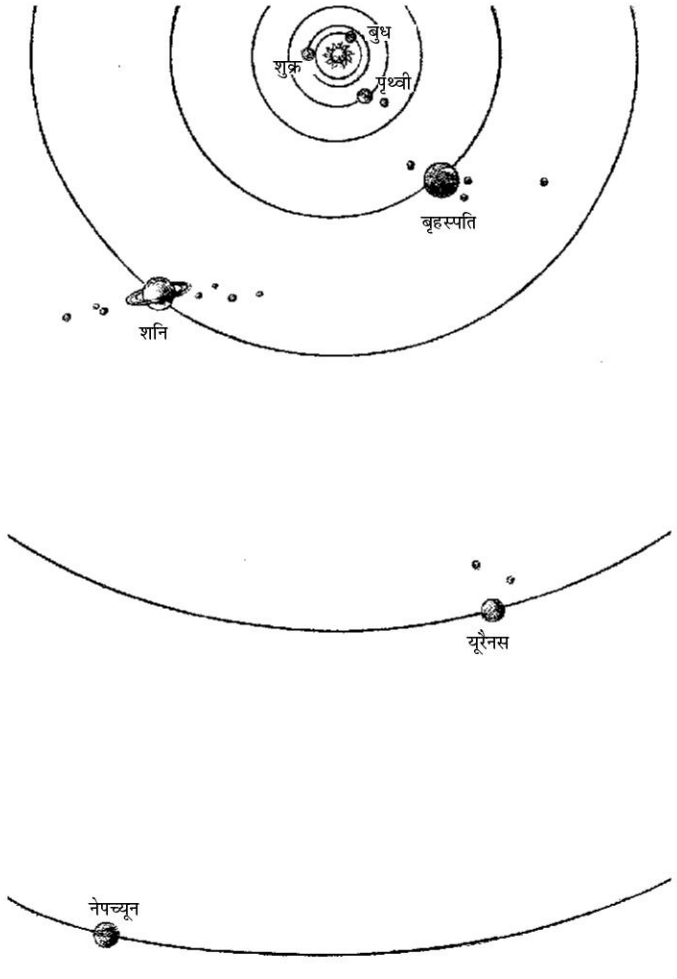

1846 का सौर-मंडल

फिर गल्ले और डारेह बेसब्री से वेधशाला की दराजों में नक्शों को खोजने लगे। भाग्यवश, उन्हें एक नया विस्तृत नक्शा मिला जो बहुत सावधानी से बनाया गया था। नक्शा आकाश के उसी क्षेत्र का था जिसका वो अध्ययन कर रहे थे। इस प्रकार का नक्शा वेधशाला में होगा इसका पहले से उन्हें कोई अंदाज नहीं था।

वे दुबारा काम पर लौटे। उन्होंने फिर से काम शुरू किया। गल्ले टेलिस्कोप में से देखकर हरेक तारे की स्थित बता रहा था और डारेह नक्शे को धीमी रोशनी में देख रहा था (जिससे प्रकाश से गल्ले को परेशानी न हो)। वो नक्शे में देखकर

गल्ले को बता रहा था कि 'हां' उस तारे को वहीं होना चाहिए, आदि।

एक घंटे के अंदर ही गल्ले ने एक तारे की स्थिति बताई और डारेह ने उत्तेजना और उमंग से कहा कि उस तारे को वहां नहीं होना चाहिए। 'यह तारा स्टार-चार्ट में नहीं है!' 23 सितम्बर 1846 को नए ग्रह की खोज हुई थो। गल्ले और डारेह ने इसकी सूचना तुरन्त ऐन्के को दी। ऐन्के के जन्मदिन पर शायद उससे बड़ा उपहार उसे और कोई नहीं दे सकता था।

अगली रात उन्होंने फिर टेलिस्कोप से देखा। इस बार ऐन्के भी उनके साथ था। अब शक की कोई गुजांइश नहीं थी। उस पिंड की स्थिति अब बदल गई थी और वो एक छोटे ग्लोब जैसा दिख रहा था।

इस समाचार को ग्रेट ब्रिटेन पहुंचने में कुछ समय लगा। चैलिस अभी भी टेलिस्कोप से खोज रहा था और 29 सितम्बर को उसने नए ग्रह को दूसरी बार देखा। इस बार उसे वो चकती जैसा दिखा। अभी भी वो आश्वस्त नहीं हुआ था। इसलिए अगली रात उसने दुबारा से उसी पिंड को अधिक शक्तिशाली टेलिस्कोप से देखने का मन बनाया। उसे कोई जल्दी नहीं थी। अगली रात आसमान में बादल थे इसलिए वो टेलिस्कोप से देख नहीं सका।

1 अक्टूबर 1846 को नए ग्रह की खबर लंदन पहुंची। जब चैलिस ने अपने रिकार्ड देखे तो उसे स्पष्ट हुआ कि दो बार नए ग्रह को देखने के बाद भी उसने उसे नहीं पहचाना था।

एयिरी और चैलिस, दोनों ने नए ग्रह की खोज का श्रेय खुद लेने की कोशिश की। दोनों में से किसी ने भी एडम्स की गणना का जिक्र तक नहीं किया।

भाग्यवश ब्रिटिश खगोलशास्त्री जौन हर्शिल (1792-1871) जिनके पिता ने यूरैनस की खोज की थी ने दुनिया को बताया कि नए ग्रह की खोज की सारी गणना लुवेरे से पहले एडम्स ने की थी।

फ्रेंच खगोलशात्रियों ने पहले तो अंग्रेजों द्वारा, खोज का श्रेय लेने पर आपत्ति उठाई पर बाद में एडम्स और लुवेरे दोनों का इसका श्रेय मिला। आज इन दोनों को संयुक्त रूप से इस नए ग्रह को खोजने का श्रेय जाता है। एयिरी और चैलिस दोनों को उनकी

बेवकूफी और एडम्स के साथ बदसलूकी के लिए जाना जाता है। इस दौरान एडम्स बिल्कुल शांत रहा।

चैलिस की मृत्यु के बाद उसके स्थान पर एडम्स को केम्ब्रिज वेधशाला का निदेशक मनोनीत किया गया। 1881 में एयिरी की सेवानिवृति के बाद एडम्स को रॉयल एस्ट्रोनोमर का पद सम्भालने के लिए आमंत्रित किया गया। पर एडम्स को लगा कि वो खुद बहुत बूढ़ा हो चला था, इसलिए उसने मना कर दिया।

कुछ लोगों का मत था कि नए ग्रह को उसके खोजकर्ता 'लुवेरे' का नाम दिया जाए। लुवेरे काफी घमंडी था और खुद इसका पक्षधर था। परन्तु फ्रांस से बाहर के खगोलशास्त्रियों ने इसका विरोध किया। क्योंकि नए ग्रह का रंग हरा-नीला था इसलिए उसका नाम 'नेपच्यून' पड़ा। 'नेपच्यून' रोमन समुद्र भगवान का नाम है। 'नेपच्यून' नाम को लुवेरे ने पहले सुझाया था।

'नेपच्यून' के बारे में एडम्स और लुवेरे की एक धारणा गलत निकली। ऐसा मानना बिल्कुल तार्किक लग रहा था कि नेपच्यून, यूरैनस की तुलना में सूर्य से दुगनी दूरी पर होगा। पर वास्तिवकता में ऐसा नहीं था। यूरैनस से सूर्य की दूरी की तुलना में नेपच्यून सूर्य से सिर्फ डेढ़-गुना दूर था। सूर्य से 3500-मिलियन मील दूर होने की बजाए वो सिर्फ 2800-मिलियन मील दूर था। फिर भी नेपच्यून, पृथ्वी की तुलना में सूर्य से 30-गुना अधिक दूर था।

नेपच्यून, यूरैनस की तुलना में छोटा निकला, पर वो बहुत छोटा भी नहीं था। यूरैनस का व्यास 32500-मील का था जबकि नेपच्यून का व्यास 31400-मील का था। क्योंकि इन दोनों ग्रहों की चौड़ाई पृथ्वी से चार-गुना अधिक थी इसलिए वे विशाल-ग्रह या जायंट-ग्रह माने जाते थे। इनमें सबसे बड़ा ग्रह बृहस्पति था - नेपच्यून और यूरैनस के व्यास, बृहस्पति के एक-तिहाई थे।

क्योंकि नेपच्यून, सूर्य से इतनी दूर था और उसकी गति इतनी धीमी थी और वहां पर सूर्य का गुरुत्वाकर्षण बल भी इतना कम था इसलिए नेपच्यून को सूर्य की एक परिक्रमा लगाने में बहुत लम्बा समय लगता था। नेपच्यून 146.2 सालों में ही सूर्य की एक परिक्रमा लगा पाता था। नेपच्यून की खोज के बाद से वो आज तक सूर्य का एक

पूरा चक्कर नहीं लगा पाया है। जिस विशेष स्थान पर नेपच्यून की खोज हुई थी वो वहां पर 2011 में ही वापस आएगा।

अगर हम नेपच्यून पर खड़े होकर देखें तो सूर्य हमें एक मोटे बिन्दु जैसा दिखेगा। टेलिस्कोप से देखने के बाद ही हमें सूर्य एक छोटे ग्लोब जैसा दिखेगा।

सूर्य फिर भी आकाश का सबसे चमकीला तारा होगा। वो हमारे चंद्रमा से 450-गुना अधिक चमकीला होगा। और उसकी सारी चमक एक बिन्दु पर केंद्रित होगी। इसका मतलब होगा कि नंगी आंखों से सूर्य को देखने से आंखों को क्षति पहुंचने का खतरा होगा।

यूरैनस जैसे ही नेपच्यून को भी पहले देखा जा चुका था। परन्तु खगोलशास्त्रियों ने बाद में ही उसे एक नए ग्रह के रूप में पहचाना।

8 मई 1795 को फ्रेंच खगोलशास्त्री जोजेफ जीरोम डी लाहलांड (1732-1807) ने एक तारा देखा जिसकी स्थिति उन्होंने नोट की। दो दिन बाद उन्होंने उसी तारे को दूसरी जगह पाया। उन्हें लगा कि कहीं उनका पहला अवलोकन गलत तो नहीं था। इसलिए दूसरे अवलोकन को नोट कर वो उसके बारे में भ्ल गए। असल में उन्होंने कोई गल्ती नहीं की थी। 'तारा' आगे बढ़ गया था। नेपच्यून की खोज के बाद लाहलांड के रिकार्ड का दुबारा मुआयना किया गया। उन्होंने अनजाने में नेपच्यून को ही देखा था।

यह भी सम्भव है कि गैलिलियो ने भी अपने प्राचीन टेलिस्कोप से नेपच्यून को देखा हो। कम-से-कम उन्होंने एक 'तारे' को नोट किया था जो अब वहां पर नहीं है। और नेपच्यून को उस समय उस स्थान पर होना चाहिए था।

4. नेपच्यून के पास

नेपच्यून की खोज के बाद खगोलशास्त्री उसका बारीकी से निरीक्षण करने लगे।

नेपच्यून की खोज के साल 1846 में हमें उपग्रहों के बारे कुछ बातें पता थीं। पृथ्वी का एक उपग्रह, बृहस्पति के चार, शनि के सात और यूरैनस के दो उपग्रह थे। इस

प्रकार कुल मिलाकर 14 उपग्रह थे। इनमें से छह उपग्रह बड़े थे - चंद्रमा के माप के। यह छह उपग्रह थे - पृथ्वी का चंद्रमा, बृहस्पति के चार उपग्रह - आयो, यूरोपा, गायनामीड और कैलिस्टो, और शनि का सबसे बड़ा उपग्रह - टाइटेन।

क्योंकि तीन बड़े ग्रहों बृहस्पति, शनि और यूरैनस के अपने उपग्रह थे, इसलिए लोगों को लगा कि नेपच्यून के भी उपग्रह होने चाहिए। पर नेपच्यून इतनो अधिक दूरी पर था शायद इसलिए उसके उपग्रहों को देख पाना मुश्किल हो।

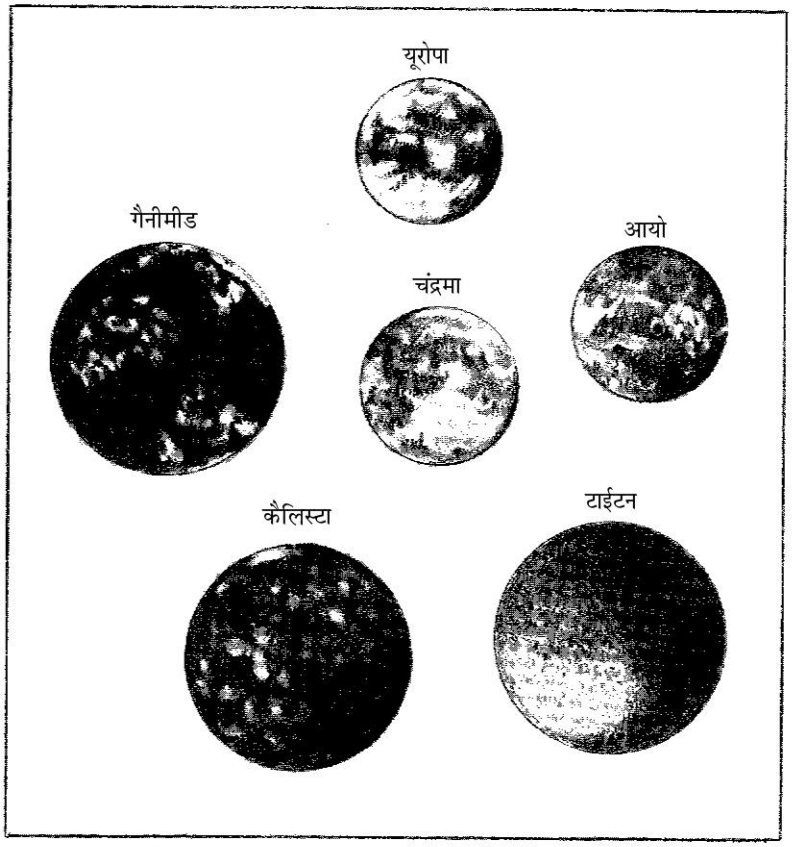

सौर-मंडल के छह सबसे बड़े उपग्रह

एक ब्रिटिश खगोलशास्त्री विलियम लैसेल (1799-1880) की नेपच्यून में विशेष रुचि थी। उन्होंने एडम्स की गणना के बारे में सुना था। एयिरी की उसमें कोई रुचि नहीं थी पर लैसेल की थी। उसने खुद अपने आप एक अच्छी क्वालिटी का टेलिस्कोप बनाया था। वो खुद नए ग्रह को टेलिस्कोप से खोजता पर दुर्भाग्यवश तभी उसकी ऐढ़ी की हड्डी टूट गई और वो पलंग पर पड़ा गया। ऐढ़ी ठीक होने के बाद वो फिर अन्य जरूरी कामों में व्यस्त हो गया और एडम्स की गणना के बारे में भूल गया। यह एडम्स

और लैसेल दोनों के लिए दुर्भाग्य की बात थी क्योंकि यह काफी सम्भव है कि लैसल ने अपने टेलिस्कोप से नए ग्रह को खोजा होता।

पर नेपच्यून की खोज के बाद लैसेल ने अपने टेलिस्कोप से उसका अध्ययन शुरू किया। 10 अक्टूबर 1846 को, नेपच्यून की खोज के ढाई हफ्ते बाद ही लैसेल ने नए ग्रह के एक उपग्रह को खोजा। लैसेल को लगा कि उसने उपग्रह खोजा था परन्तु सूर्य उस समय नेपच्यून के बहुत पास था इसलिए नेपच्यून को अच्छी तरह देख पाना मुश्किल था। इसलिए खगोलशास्त्रियों को सूर्य के नेपच्यून के पीछे जाने का इंतजार करना पड़ा। अब वो काली रात में नेपच्यून को अच्छी तरह देख सकते थे। जुलाई 1847 को यह कर पाना सम्भव हुआ और तब लैसेल द्वारा नेपच्यून के पहले उपग्रह को खोजने की पुष्टि हुई।

1851 में लैसेल ने यूरैनस के दो उपग्रह खोजे और उन्हें 'एरियल' आर 'अमब्रियल' का नाम दिया।

नेपच्यून के उपग्रह को 'ट्राईटेन' नाम दिया गया। यूनानी मिथकों में 'ट्राईटेन' समुद्र के देवता के बेटे का नाम था।

खगोलशास्त्री 'ट्राईटेन' के बारे में ज्यादा कुछ बता नहीं सके। क्योंकि दूरी इतनी अधिक थी इसलिए वो एक धुंधले प्रकाश-बिन्दु जैसा ही दिखता था। 'ट्राईटेन' को मैग्निफाई (आवर्धन) कर एक छोटी गेंद के रूप में देखना मुश्किल था। अगर ऐसा होता तो उसका व्यास ज्ञात किया जा सकता था। ट्राईटेन की चमक और दूरी, और अन्य उपग्रहों जैसे ही प्रकाश प्रतिबिम्बित करने के आधार पर खगोलशास्त्रियों को 'ट्राईटेन' हमारे चंद्रमा जितना ही बड़ा लगा।

खोजे उपग्रहों में 'ट्राईटेन' सातवां सबसे बड़ा उपग्रह था। 'ट्राईटेन' की खोज के बाद कोई अन्य बड़ा उपग्रह नहीं खोजा गया था जबकि कई छोटे उपग्रह खोजे जा चुके थे।

'ट्राईटेन' नेपच्यून से 220,000-मील की दूरी पर स्थित है और उसकी परिक्रमा लगाता है। यही दूरी पृथ्वी और चंद्रमा के बीच की है। नेपच्यून, पृथ्वी से बड़ा है और उसका गुरुत्वाकर्षण खिंचाव पृथ्वी से अधिक है। इसलिए चंद्रमा, 27 और 2/3 दिनों में

पृथ्वी की परिक्रमा लगाता है। 'ट्राईटेन', छह दिनों से कम काल में नेपच्यून का चक्कर काटता है।

'ट्राईटेन' से नेपच्यून की दूरी और परिक्रमा की गति से हम पृथ्वी का भार ज्ञात कर सकते हैं। इसके लिए हमें कल्पना करना पड़ेगी कि वो एक तराजू पर रखा है और पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण बल उसे खींच रहा है।

वैसे नेपच्यून का व्यास यूरैनस से कम है परन्तु उसका भार यूरैनस से 1/6 अधिक है। नेपच्यून, पृथ्वी से 7.5 गुना भारी है जबकि यूरैनस पृथ्वी से 14.6 गुना भारी है।

साइज में छोटे होने के बावजूद नेपच्यून, यूरैनस से क्यों भारी है?

ग्रह - बर्फ, पत्थर और धातुओं जैसे पदार्थों के बने होते हैं। समान आयतन का पत्थर, बर्फ से भारी होगा और समान आयतन का धातु, पत्थर से भारी होगा। पृथ्वी जैसा ग्रह मूलत: पत्थर और धातु का बना है। वो अपने आकार के हिसाब से बहुत भारी है। कैस्टिलो और टाईटेन जैसे उपग्रह जो मूलत: बर्फ के बने हैं अपने आकार को तुलना में बहुत हल्के हैं। यूरैनस और नेपच्यून दोनों ही बर्फ, पत्थर और धातुओं के बने हैं। पर नेपच्यून में पत्थर और धातुओं की मात्रा ज्यादा है और बर्फ की कम। इसीलिए नेपच्यून, यूरैनस से साइज में कम होने के बावजूद उससे भारी है। ऐसा कैसे हुआ इसका उत्तर किसी को नहीं पता।

वैसे नेपच्यून और यूरैनस बड़े ग्रह हैं फिर भी वे जायंट-ग्रह बृहस्पति और शनि से छोटे हैं। शनि का भार नेपच्यून का साढ़े पांच-गुना है और पृथ्वी से 95-गुना अधिक है। बृहस्पति का भार पृथ्वी से 318-गुना अधिक है।

चंद्रमा, पृथ्वी की परिक्रमा, पूर्व से पश्चिम तक लगाता है। इसे सामान्य समझा जाता है क्योंकि अधिकांश उपग्रह, पूर्व से पश्चिम दिशा में ही अपने ग्रहों की परिक्रमा करते हैं। पर ट्राईटेन, नेपच्यून की परिक्रमा पश्चिम से पूर्व की ओर लगाता है। इस उल्टी गति को 'रेटरोग्रेड-गति' कहते हैं। रेटरोग्रेड एक लैटिन शब्द है जिसका अर्थ है 'उल्टे-कदम'। ट्राईटेन, नेपच्यून की उल्टी दिशा में परिक्रमा क्यों लगाता है इसका उत्तर किसी को नहीं पता।

ट्राईटेन की खोज के सौ साल बाद तक नेपच्यून का अन्य कोई उपग्रह नहीं मिला। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। नेपच्यून, पृथ्वी से इतनी अधिक दूरी पर था कि ट्राईटेन से छोटे किसी उपग्रह को देख पाना बहुत मुश्किल होता।

1940 में डच-अमरीकी खगोलशास्त्री जेरर्ड पीटर कौयपर (1905-1973) दूर स्थित ग्रहों का अध्ययन कर रहे थे। उन्होंने पाया कि शनि के सबसे बड़े उपग्रह टाइटन के चारों ओर एक वातावरण था। वो पहला ऐसा उपग्रह था जिसके चारों ओर वातावरण पाया गया था।

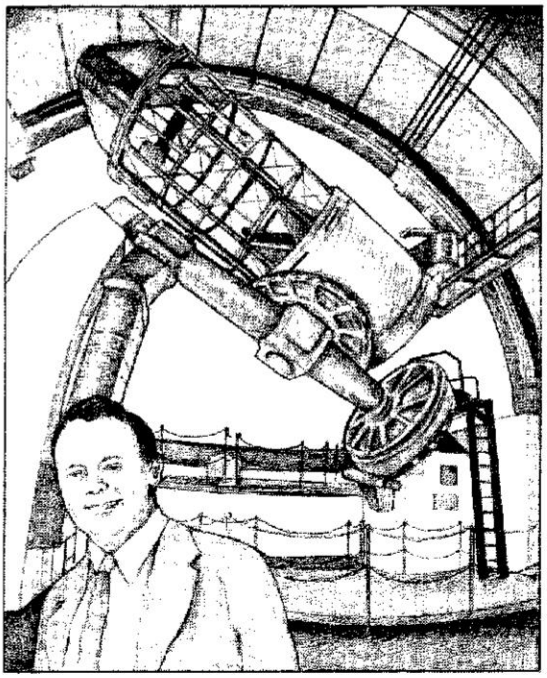

जेरर्ड पीटर कौयपर,मैकडोनल्ड रेफ्लेक्टिंग टेलिस्कोप के साथ। इसी से उन्होंने १९४८ में मिरांडा की खोज की।

कौयपर ने यूरैनस का भी अध्ययन किया। यूरैनस के तब तक चार उपग्रह थे जिनमें से दो हर्शिल ने और अन्य दो लैसेल ने खोजे थे। सबसे बड़े उपग्रह टाइटैनिया का व्यास 990-मील का था, जो हमारे चंद्रमा के व्यास से आधा था।

1948 में कौयपर ने यूरैनस का पांचवा उपग्रह खोजा। यह उपग्रह यूरैनस के पास था और अन्य चारों उपग्रहों से छोटा था। उसका व्यास 300-मील का था। कौयपर ने उसे 'मिरांडा' नाम दिया।

फिर 1949 में कौयपर ने नेपच्यून का दूसरा उपगह खोजा। उसने उनका नाम 'नीरियड' रखा। यूनानी मिथकों में 'नीरियड' जलपरियां होती हैं। नीरियड का व्यास 350-मील का है और नेपच्यून की दूरी के कारण उसे देखना बहुत मुश्किल है।

नीरियड, नेपच्यून के चारों ओर सामान्य, पश्चिम से पूर्व की ओर चक्कर लगाता है परन्तु उसकी कक्षा बहुत अनूठी है। अधिकांश उपग्रहों की कक्षाएं लगभग गोलाकार होती हैं। परन्तु नीरियड की कक्षा लम्बी-अंडाकार है। नेपच्यून इस अंडाकार कक्षा के एक

सिरे पर स्थित है। इसलिए नीरियड एक छोर पर नेपच्यून के बहुत पास होता है परन्तु विपरीत छोर पर उतना ही दूर होता है।

नीरियड और नेपच्यून के बीच की औसतन दूरी 35-लाख मील की है। अपनी कक्षा के एक छोर पर नीरियड, नेपच्यून से 864000-मील दूर होता है। और कक्षा के दूसरे छोर पर वो 98-लाख मील दूर होता है। नीरियड को नेपच्यून की परिक्रमा लगाने में 360-दिन लगते हैं।

नीरियड की इस विचित्र कक्षा को लोगों ने समझने का प्रयास किया है। कुछ लोगों के अनुसार नीरियड एक एस्ट्रोइड होगी जो पूर्व में कभी नेपच्यून के पास से गुजरी होगी और फिर नेपच्यून के गुरुत्वाकर्षण बल के कारण उसमें फंस गई होगी।

1977 में इन दूर स्थित विशाल ग्रहों के बारे में एक अन्य चौका देनी वाली जानकारी सामने आई। उस साल 10 मार्च को यूरैनस एक तारे के सामने से होकर गुजरने वाला था। यह महत्वपूर्ण घटना थी क्योंकि जब यूरैनस तारे के सामने से गुजरता तो उस समय तारा यूरैनस के वातावरण में कुछ समय के लिए चमकता। आर यूरैनस के गुजरने के बाद एक बार फिर से तारा यूरैनस के वातावरण में चमकता। इस काल में यूरैनस के वातावरण के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त की जा सकती थी।

खगोलशास्त्रियों ने पृथ्वी के वातारवरण में बहुत ऊंचाई से इस घटना का अध्ययन किया। ऊंचाई के कारण पृथ्वी का वातावरण अधिक विकृति पैदा नहीं करता। यूरैनस के तारे के गुजरने के काल में तारा नौ बार चमका और बंद हुआ यानि उसने नौ बार 'ब्लिंक' किया।

यूरैनस के वातावरण में नौ गोले (रिंग्स) थे और उन्होंने नौ बार तारे को निस्तेज (ढंका) किया। उससे पहल केवल शनि के रिंग्स के बारे में लोगों को पता था। शनि के रिंग्स चौड़े और चमकीले थे जबकि यूरैनस के रिंग्स पतले और धुंधले थे और इसलिए वो पृथ्वी से दिखाई नहीं देते थे।

उसके बाद से नेपच्यून का बारीकी से अध्ययन होने लगा - यह जानने के लिए कि जब वा किसी तारे के सामने से गुजरता है तो क्या होता है। खगोलशास्त्रियों ने

सोचा कि नेपच्यून के भी रिंग्स होंगे। तारे कभी नेपच्यून के एक ओर 'ब्लिंक' करते पर दूसरी ओर नहीं।

5. स्पेस प्रोब्स

नेपच्यून की बारीकियों को पृथ्वी से देख और समझ पाना एक कठिन कार्य था। नेपच्यून, पृथ्वी से 2800-मिलियन मील दूर था। इतनी अधिक दूरी से बहुत शक्तिशाली टेलिस्कोपों से भी कुछ देखा पाना मुश्किल था।

पर धीरे-धीरे वो समय आ गया जब खगोलशास्त्रियों को केवल पृथ्वी से ही नेपच्यून का अवलोकन करने की जरूरत नहीं थी। 1957 से अंतरिक्ष युग (स्पेस-ऐज) शुरू हो चुका था और उसी साल एक कृत्रिम सैटालाइट (उपग्रह) को अंतरिक्ष में भेजा गया। 1969 में पहला मानव चंद्रमा पर खड़ा था।

मनुष्य अभी भी चंद्रमा के आगे नहीं जा पाया है पर मानव निर्मित रॉकेट-प्रोब्स को अन्य ग्रहों पर भेजा गया है। इन रांकेट्स में कोई मानव नहीं होता है पर उसमें कैमरे होते हैं और अनेकों प्रकार के माप लेने के उपकरण होते हैं जिन्हें बाद में पृथ्वी पर भेजा जाता है।

1960 में प्रोब्स, शुक्र और मंगल ग्रहों के पास से गुजरे। अंत में कुछ प्रोब्स इन ग्रहों की सतहों पर भी उतरे। एक प्रोब ने बुध का बहुत करीबी से फोटो लिया। 1986 में जब हैली-धूमकेतू पृथ्वी से होकर गुजर रहा था तो प्रोब्स ने उसका अध्ययन किया।

1970 में प्रोब्स को मंगल ग्रह के आगे के जायंट-ग्रहों पर भेजा जाने लगा। पायोनियर-10 और 11 सबसे पहले बृहस्पति ग्रह के पास से गुजरे और उन्होंने इस विशाल ग्रह और उसके उपग्रहों का अध्ययन किया।

उसके पश्चात दो अन्य प्रोब्स, वौयेजर-1 और वौयेजर-2 को भी भेजा गया। वौयेजर-2 आज तक का सबसे सफल प्रोब रहा। वौयेजर-1 और 2 दोनों बृहस्पति और

शनि तक गए। पर बाद में वौयेजर-2 उसके भी आगे यूरैनस और नेपच्यून तक गया और उसने वहां से उनके फोटोग्राफ्स और माप भी भेजे।

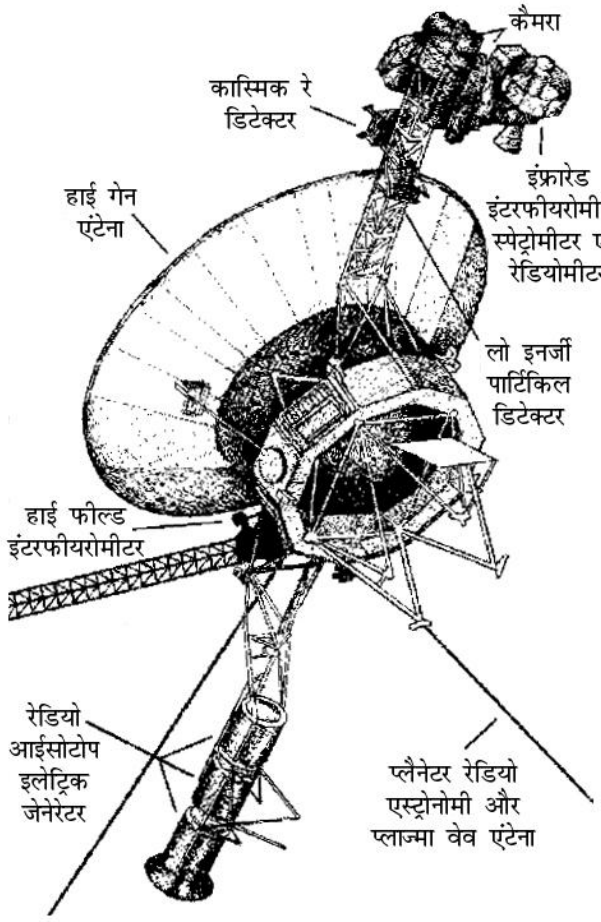

वौयेजर-2

वौयेजर-2 को 1977 में भेजा गया था। नौ साल के बाद जनवरी 1986 में उसने यूरैनस को पार किया। यूरैनस पर सूर्य की चमक, पृथ्वी की अपेक्षा केवल 1/368 होने के बावजूद वौयेजर यूरैनस और उसके उपग्रहों के फोटोग्राफ्स ले पाया। इसके लिए कैमरे की खिड़की को दो-मिनट तक खोले रखना पड़ा।

यूरैनस ग्रह का रंग नीला था और वहां का वातावरण बहुत शांत था। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। बृहस्पति के वातावरण बहुत सक्रिय था क्योंकि वो सूर्य के बहुत करीब था। सूर्य की ऊष्मा से ही वातावरण सक्रिय होता था। बृहस्पति की तेज हवाओं से बादलों के पट्टे बनते थे। बृहस्पति पर बहुत बड़ा 'ग्रेट रेड स्पाट' था। यह एक विशाल बवंडर था। बवंडर इतना बड़ा था कि हमारी पृथ्वी उसमें आसानी से समा सकती थी।

शनि क्योंकि बृहस्पति की अपेक्षा सूर्य से दूर था इसलिए उसे बृहस्पति की अपेक्षा सूर्य की केवल 1/3 ऊष्मा ही मिलती थी। वहां पर पट्टे भी अस्पष्ट थे और तूफान नहीं थे। क्योंकि यूरैनस को बृहस्पति की तुलना में सूर्य की 1/13 ही ऊष्मा प्राप्त होती थी इसलिए वहां शांति रहती थी।

वौयेजर-2 द्वारा भेजी जानकारी से वैज्ञानिक गणना कर पाए कि यूरैनस अपने अक्ष पर एक बार साढ़े सत्तरह घंटों में घूमता होगा। यूरैनस के घूमने के काल की इससे

पहले बस अटकले ही लगाई जा सकती थीं। वौयेजर-2 ने यूरैनस के पतले और धुंधले रिंग्स को भी स्पष्ट दिखाया। उनकी संख्या 10 नहीं बल्कि 9 थी।

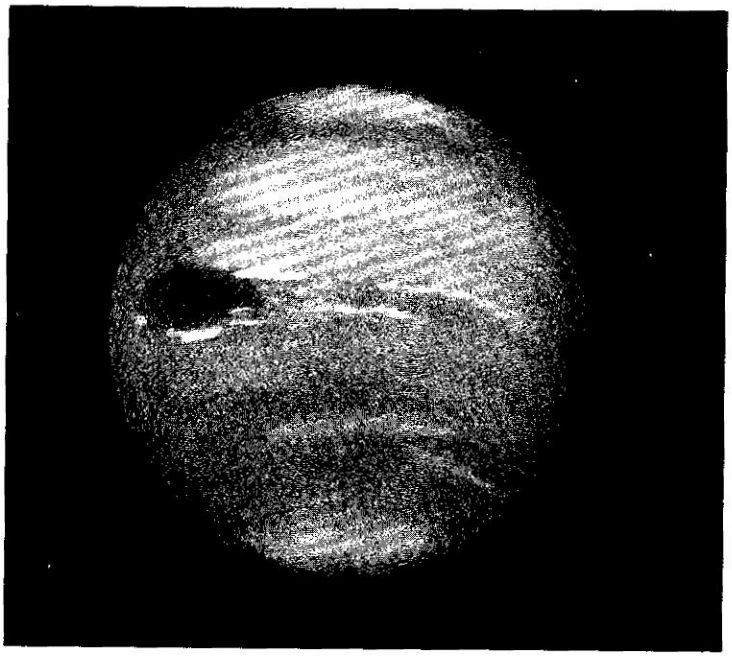

नेपच्यून की सतह पर 'ग्रेट डार्क स्पाट' यानि विशाल काला धब्बा।

यूरैनस के उपग्रह बहुत गहरे रंग के पदार्थ के बने पाए गए। क्योंकि वे पृथ्वी से वो इतने चमकदार दिखते थे इसलिए उन्हें पूर्व अनुमानों से अधिक बड़ा होना चाहिए था। उनकी सतह भी रोचक और अनूठी थी। विशेषकर उपग्रह मिरांडा की सतह बहुत ही विचित्र थी। खगोलशास्त्रियों को ऐसा लगा कि बहुत पहले मिरांडा की कहीं टक्कर हुई होगी और उसमें उसके टुकड़े हो गए होंगे। बाद वे टुकड़े एक बेतरतीब आकार में आपस में जुड़ गए होंगे।

वौयेजर-2 यूरैनस के भी आगे अगस्त 1989 में नेपच्यून के पास से गुजरा।

पहली महत्वपूर्ण बात यह थी कि नेपच्यून का रंग यूरैनस की तरह ही नीला था। असल में नेपच्यून, यूरैनस से भी नीला था।

नेपच्यून और जायंट-ग्रहों की सतहें ठोस नहीं थीं। असल में वो एक बहुत सघन वातावरण की ऊपरी परतें थीं। वातावरण दो सरल गैसों - हाईड्रोजन और हीलियम का बना था। ये गैसें रंगहीन होती हैं। उनमें बहुत अल्प मात्रा में कुछ अन्य गैसें भी मिली होती हैं जो वातावरण को रंग प्रदान करती हैं।

बृहस्पति में तमाम अन्य गैसे भी होती थीं। वो क्या थीं यह हमें नहीं पता पर वे ग्रह को एक भूरा, नारंगी, पीला और सफेद रंग प्रदान करती थीं। बृहस्पति पर बड़ा बवंडर देखने में लाल दिखता था। वही 'जायंट रेड स्पाट' था।

बृहस्पति की तुलना में सूर्य से अधिक दूर होने के कारण शनि अधिक ठंडा था। शनि के ऊपरी वातावरण का कुछ रंगीन पदार्थ जमी हुई स्थिति में था। इस वजह से शनि का रंग बृहस्पति की तुलना में कुछ हल्का था। शनि का रंग पीला-सफेद दिखता था।

जो पदार्थ बृहस्पति और शनि को रंगीन करते थे वे यूरैनस और नेपच्यून में जमे होते थे। यूरैनस और नेपच्यून का वातावरण मुख्यत: तीन पदार्थों का बना होता था जो कम तापमान पर भी गैसीय स्थिति में रहती थीं। यह गैसें थीं हाईड्रोजन, हीलियम और मीथेन। मीथेन का एक परमाणु चार हाईड्रोजन और एक कार्बन के अणु से बनती थी। पृथ्वी पर मीथेन एक प्राकृतिक पदार्थ जैसे पाई जाती है।

पृथ्वी पर अल्प मात्रा में पाई जाने वाली मीथेन रंगहीन होती है। पर जब वो बहुत मात्रा में होती है और हाईड्रोजन और हीलियम के साथ मिली होती है तो उसका रंग नीला दिखता है। इसी कारणवश यूरैनस और नेपच्यून नीले दिखते हैं।

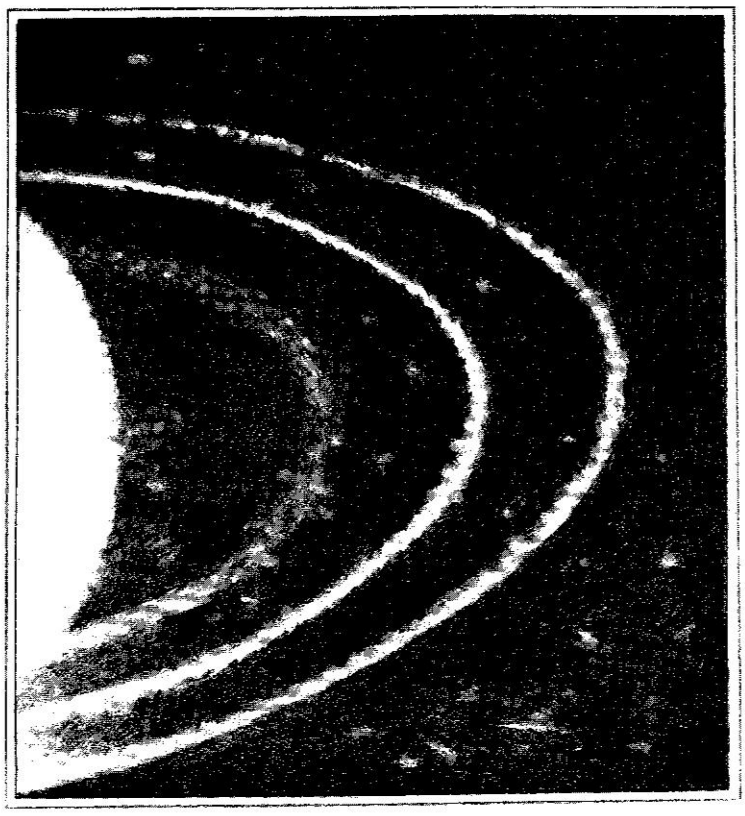

नेपच्यून के रिंग्स

वैसे यूरैनस और नेपच्यून में एक मुख्य अंतर है। यूरैनस एक शांत ग्रह है क्योंकि उसे सूर्य की बहुत कम ऊष्मा मिलती है। बृहस्पति और शनि को सूर्य की बहुत अधिक ऊष्मा मिलती है। खगोलशास्त्रियों की अपेक्षा थी कि नेपच्यून, यूरैनस से भी अधिक शांत होगा क्योंकि उसे यूरैनस की तुलना में सूर्य की केवल 2/5 गुना ऊष्मा ही मिलती है।

पर वास्तिवकता में ऐसा नहीं है। आश्चर्य की बात यह

है कि नेपच्यून एक सक्रिय ग्रह है। उसके बाहरी वातावरण में हवाएं 1500-मील की गति से चलती हैं जो बृहस्पति से कहीं अधिक हैं। पर बृहस्पति को नेपच्यून की तुलना में सूर्य की 20-गुना अधिक ऊष्मा मिलती है। तो फिर नेपच्यून की तेज हवाओं का राज क्या है? नेपच्यून को अपने अंदर से सूर्य की तुलना में 7 .5 गुना ऊष्मा मिलती है। नेपच्यून की आंतरिक ऊष्मा इतनी अधिक क्यों है यह अभी तक एक रहस्य है।

इससे भी आश्चर्य की बात है कि नेपच्यून पर भी एक बवंडर है जो बृहस्पति के 'रेड जायंट स्पाट' जैसा है। और वो लगभग उसी स्थान पर है जहां बृहस्पति का बवंडर है। नेपच्यून का बवंडर बृहस्पति से छोटा है। वैसे नेपच्यून ग्रह भी बृहस्पति से बहुत छोटा है। पर अगर बृहस्पति सिकुड़ कर छोटा होता तो वो बिल्कुल नेपच्यून जैसा लगता। नेपच्यून का बवंडर नीला है और हम उसे 'जायंट ब्लू स्पाट' बुला सकते हैं। नेपच्यून की रेडियो तरंगों के अध्ययन के बाद खगोलशास्त्रियों ने आकलन किया कि वो अपनी अक्ष पर लगभग सोलह घंटों में एक चक्कर लगाता है। यानि नेपच्यून के घूमने को गति यूरैनस से कुछ अधिक थी। 'जायंट ब्लू स्पाट' ग्रह पर उससे कम गति से घूमता है।

नेपच्यून और बृहस्पति पर यह बवंडर क्यों हैं, जबकि शनि और यूरैनस पर बवंडर नहीं हैं? बवंडर के घूमने में बहुत सारी ऊर्जा खर्च होती होगी। हमें एक ही सांत्वना है कि सूर्य के करीब होने के कारण बृहस्पति को बवंडर के लिए सूर्य से बहुत ऊर्जा मिलती है। पर अगर शनि और यूरैनस को सूर्य से बवंडर शुरू करने लायक ऊर्जा नहीं मिली फिर नेपच्यून जो उनसे भी दूर है को ऊर्जा क्यों मिली? शायद इसका भी उत्तर नेपच्यून की आंतरिक ऊर्जा में छिपा है।

जो प्रोब्स बाहरी ग्रहों के पास गए उन्हें वहां इन ग्रहों में अतिरिक्त उपग्रह मिले। यह उपग्रह बहुत छोटे थे और उन्हें पृथ्वी से देख पाना सम्भव नहीं था। जो उपग्रह प्रोब्स द्वारा मिले वे सभी अपने ग्रहों के नजदीक थे। जो उपग्रह हमें पृथ्वी से दिखते हैं वे अक्सर बड होते हैं।

गेलिलियो ने 1610 में बृहस्पति के चार उपग्रहों की खोज की थी। 1892 में एक अन्य उपग्रह खोजा गया। यह उपग्रह छोटा था और अन्य उपग्रहों की तुलना में बृहस्पति के ज्यादा नजदीक था। 1900 में बृहस्पति के आठ अन्य उपग्रहों की खोज हुई। यह

उपग्रह शायद बृहस्पति द्वारा पकड़े हुए एस्ट्रोइड्स थे। इस प्रकार बृहस्पति के 14 उपग्रह थे। इसके बाद वौयेजर-1 ने बृहस्पति के तीन और उपग्रह खोजे।

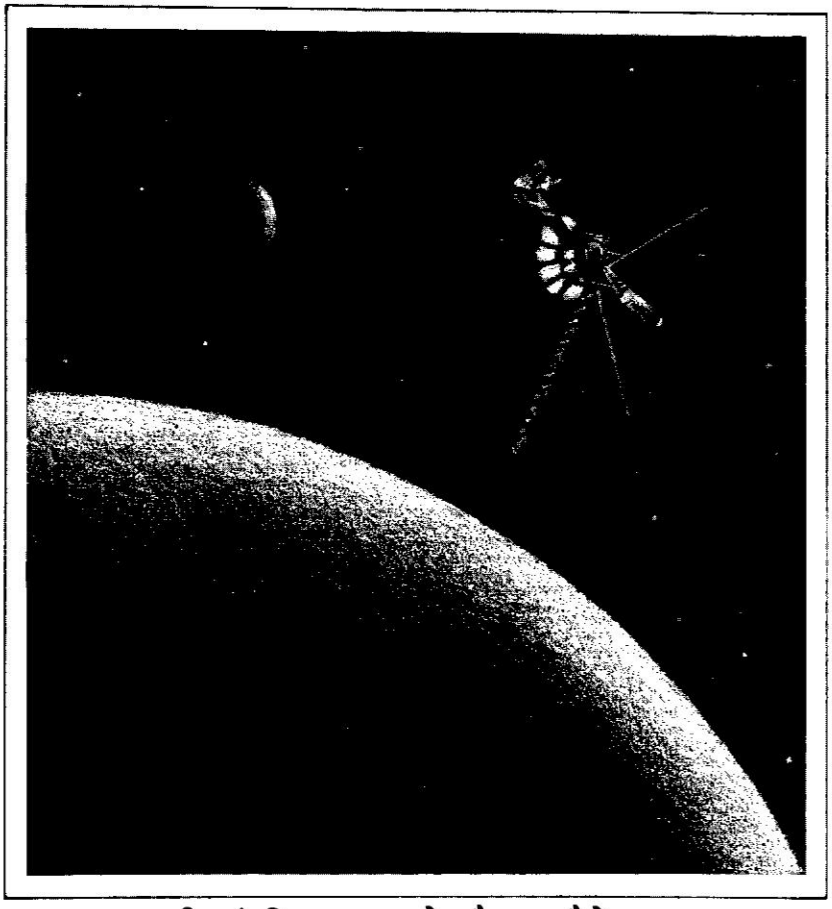

अपनी अंतरिक्ष यात्रा के दौरान वौयेजर-२
नेपच्यून ग्रह को पार करता हुआ।

पृथ्वी से शनि के नौ उपग्रह दिखते थे पर वौयेजर प्रोब्स ने आठ छोटे उपग्रह और खोज निकाले। यूरैनस के पृथ्वी से पांच उपग्रह दिखते थे परन्तु वौयेजर-2 ने दस छोटे उपग्रह और खोज निकाले। यह सभी यूरैनस के बहुत पास थे।

नेपच्यून बाकी ग्रहों से कुछ अलग नहीं था। पृथ्वी से खगोलशास्त्रियों ने केवल दो ही उपग्रह - ट्राईटन और नीरियड ही देखे थे। पर वौयेजर-2 को नेपच्यून के पास छह और छोटे उपग्रह मिले।

अन्य शब्दों में प्रोब्स के जाने से पहले खगोलशास्त्रियों को अपने सौर-मंडल में केवल 33 ही उपग्रहों के बारे में पता था। अब हमें साठ उपग्रहों का पता है। नए उपग्रह सभी छोटे हैं - उनका व्यास 50-मील से कम का है।

एक अन्य खोज थी रिंग्स को लेकर। जब दोनों वौयेजर बृहस्पति के पास से गुजरे तो उन्हें उस विशाल ग्रह के चारों ओर एक मलबे और धूल की पतली रिंग दिखाई दी। पृथ्वी से कभी किसी ने उस रिंग को नहीं देखा था। वौयेजर-2 को तब यूरैनस के रिंग्स दिखे। उसके बाद खगोलशास्त्री नेपच्यून के चारों ओर रिंग्स देखने की अपेक्षा करने लगे।

और वौयेजर-2 को नेपच्यून के चारों ओर तीन रिंग्स भी दिखे। पर वे सभी पतले थे और उनमें गुच्छे थे। रिंग्स की अपेक्षा गुच्छे तारे को अधिक ढंकते थे। इसलिए जब खगोलशास्त्रियों ने नपच्यून के पास तारों के प्रकाश को मंद होते देखा तो उन्हें लगा कि कहीं रिंग्स अपूर्ण तो नहीं है।

अब हमें पता है कि चार में से तीन विशाल ग्रहों के पतले और धुंधले रिंग्स होते हैं। अब प्रश्न यह है - कि चारों विशाल ग्रहों में से शनि के रिंग्स ही इतने चौड और चमकीले क्यों हैं? शनि की ऐसी क्या विशेषता है? खगोलशास्त्रियों को इसके बारे में कुछ नहीं पता।

जब वौयेजर-2 शनि के पास से गुजरा तो उसने शनि के सबसे बड़े उपग्रह टाईटन का अध्ययन किया। उसे टाईटन का वातावरण अत्यधिक सघन लगा और वो नाईट्रोजन गैस का बना था। पृथ्वी की हवा में भी अधिकांश नाईट्रोजन गैस ही होती है। टाईटन के वातावरण में बहुत मात्रा में मीथेन गैस भी थी जिसने सूर्य के प्रकाश में बदलकर जटिल परमाणु बनाए। यह परमाणु धुंधली बूंदों में बदले और उन्होंने टाईटन की ठोस सतह को ढंक दिया। इससे खगोलशास्त्री उसका निरीक्षण नहीं कर सके।

खगोलशास्त्रियों को लगा कि ट्राईटेन, नेपच्यून का सबसे बड़े उपग्रह भी टाईटन जैसा दिखेगा। पर जब वौयेजर-2 उसके पास से गुजरा तो ट्राईटेन खगोलशास्त्रियों की अपेक्षा से बहुत छोटा निकला। उसका गुरुत्वाकर्षण बल टाईटन से बहुत कम था और वो एक बहुत विरल वातावरण को ही खींच कर रख सकता था। टाईटन का वातावरण

पृथ्वी की अपेक्षा 1/60000 गुना विरल था। इसलिए उसकी ठोस सतह साफ नजर आती थी।

टाईटन का विरल वातावरण, ट्राईटेन की ही तरह नाईट्रोजन और मीथेन का बना था और उसकी सतह जमी नाईट्रोजन और मीथेन से ढंकी थी। इसलिए ट्राईटेन एक बहुत ठंडा स्थान था। उसका सतही तापमान शून्य के नीचे 223-डिग्री सेल्सियस था।

बर्फ से ढंकी उसकी सतह प्रकाश को प्रचुर मात्रा में प्रतिबिम्बित करती थी। इसकी वजह से ट्राईटेन पृथ्वी से चमकता हुआ दिखता था। अगर वो कि गहरे रंग के पत्थर का बना होता तो वो धुंधला दिखता। चमकीली सतह के कारण ट्राईटेन को अपनी चमक के हिसाब से कुछ छोटा होना चाहिए। वास्तविकता में ट्राईटेन का व्यास केवल 1700-मील का निकला। वो अभी भी एक बड़ा उपग्रह था पर फिर भी वो सातवें स्थान पर था। ट्राईटेन की तुलना में चंद्रमा का व्यास 2160-मील का था।

ट्राईटेन की सतह ठंडी थी पर वो अंदर से गर्म था जिससे जमी नाईट्रोजन वाष्प में बदल जाती थी। इससे अंदर जमी हुई नाईट्रोजन बाहर बर्फ के ज्वालामुखी के रूप में बाहर निकलती थी जिससे गड्ढे और पहाड़ियां बनते थे।

उस सब के बाद वौयेजर-2 नेपच्यून के आगे निकल गया। वो अगले लाखों-करोड़ों वर्ष तक इसी प्रकार अंतरिक्ष की यात्रा करता रहेगा। जहां तक हमें पता है वो अब किसी भी खगोलीय पिंड के पास से नहीं गुजरेगा। और शायद तब तक उसको ऊर्जा भी क्षीण हो जाएगी और वो हमें उन पिंडों की जानकारी भेजने में असमर्थ होगा।

पर उसने बारह वर्ष एक महान हीरो का काम किया और उसके लिए हम उसे सलाम करते हैं!

अंत